चतुर्थ अध्याय || पृष्ठ 98-121

"भूले बिसरे चित्र' उपन्यास में कथोपकथन"

* * *

चरित्र-चित्रण के पश्चात कथोपकथन उपन्यास का तीसरा तत्व माना गया है । पात्रों में स्वाभाविकता लाने के लिए तथा उनमें सजीवता लाने के लिए उपन्यास में कथोपकथन या संवादों का प्रयोग होता है । अतः संवाद भी उपन्यास का बहुत ही आवश्यक तत्व न होते हुए भी महत्वपूर्ण है । कहना न होगा कि, कथोपकथन - शिल्प का चरित्र - शिल्प से अत्यंत घनिष्ठ सम्बन्ध होता है, साथ ही कथा - विकास और लेखक के अन्य उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कथोपकथन अत्यंत सहायक सिध्द होते हैं । नाटकों की भाँति उपन्यासों में कथोपकथन प्राण-तत्व तो नहीं होते फिर भी पात्रों के (विशेषतः उनके अंतः पक्षों का) चरित्रोद्घाटन, उनकी मनोभावनाओं के स्पष्टीकरण कथानक के विकास या उसकी विलुप्त कड़ियों को जोड़ने आदि की दृष्टि से उपन्यासों में भी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं ।

डा.प्रतापनारायण टंडन के शब्दों में कहा जा सकता है कि, "कथोपकथन के द्वारा उपन्यासकार पाठकों को अपने पात्रों के विषय में विविध जटिल परिस्थितियों तथा अन्तर्द्वन्द्व सम्बन्धि इतना प्रत्यक्ष बोध करता है, जो अन्य किसी माध्यम से सम्भव नहीं है । कथोपकथन के द्वारा उपन्यासकार अपनी कृति के चरित्रों की व्याख्या करता है और उन्हें विकास की ओर अग्रसर करता है ।"[1] डा.बैजनाथ प्रसाद शुक्ल आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में कथोपकथन का महत्व निर्धारित करते हुए लिखते हैं, "उपन्यासों के पात्र अपने कथोपकथनों में मानव-जीवन की अनुराग-विराम और सुख - दुःख निमज्जित आनन्द एवं करुणा - कलित कथा कहते हैं । शिल्प की दृष्टि से आज के सफल उपन्यासों में, जो वार्तालाप प्राप्त होता है वह कथानक को सहज स्वाभाविक गति प्रदान कर चरित्र - चित्रण में योगदान देता है । इसीलिए इसका अपना महत्व औपन्यासिक कला में सर्वविदित है । देशकाल के चित्रण में नीरस विवरणात्मक स्थालों से औपन्यासिक सौष्ठव की रक्षा करने के लिए कथोपकथन का प्रश्रय लिया जाता है ।"[2] इस प्रकार हिन्दी उपन्यासों में कथोपकथन-शिल्प का महत्व सर्वविदित है । संक्षेप में एक उपन्यास में निम्नलिखित उद्देश्यों से कथोपकथन का समावेश होता है -

1. कथानक का विकास करना ।
2. कथानक में तरलता और लोच पैदा करना ।
3. पात्रों के मन के संघर्ष और भावों को प्रकट करना ।
4. पात्रों के चरित्र पर प्रकाश ड़ालना और उनमें सजीवता लाना ।
5. लेखक के उद्देश्य को स्पष्ट करना ।

उद्देश्यों की इन विविधताओं के फलस्वरुप उपन्यास के कथोपकथन के निम्नांकित कुछ उल्लेखनिय गुण आवश्यक बन जाते हैं -

अ. कथोपकथन में स्वाभाविकता, सजीवता होनी चाहिए ।

ब. कथोपकथन विषय के अनुकूल होना चाहिए ।

क. कथोपकथन पात्र, परिस्थिति तथा भाषा के अनुरुप रोचक, प्रभावशाली और मर्मस्पर्शी होने चाहिए ।

ड. कथोपकथन संक्षिप्त हों ।

इ. कथोपकथन में सार्थकता, सम्बध्दता तथा सरसता का होना आवश्यक है । तथा

ई. कथोपकथन व्यंग्यात्मक तथा उद्देश्यपूर्ण होने कचाहिए ।

'भूले बिसरे चित्र' के नियोजित कथोपकथनों में उसकी शिल्पगत लगभग सभी विशेषताएँ तथा गुण परिलक्षित होते हैं; जिसमें पात्रों की भाव-भंगिमाओं के भी उल्लेख से उनकी प्रभवान्विति को और भी अधिक उजागर कर दिया गया है । आलोच्च उपन्यास पाँच छोटे - बड़े खण्डों में विभाजित है और प्रत्येक खण्ड़ का आरम्भ और अन्त स्वाभाविक, सार्थक तथा रोचक कथोपकथनों के द्वारा प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है । उपन्यास के आरम्भ में मुंशी शिवलाल का चरित्रोद्घाटन बड़े सजीव और स्वाभाविक कथोपकथन से हुआ है, जिससे मुंशी शिवलाल का परिचय प्राप्त होता है साथ ही उपन्यास का आरम्भिक कथोपकथन कथा-विकास में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान देता है ।

उपन्यास में विविध प्रकार के कथोपकथनों का शिल्पगत प्रयोग हुआ है । अतएव इसमें स्वाभाविक, मनोवैज्ञानिक, सुन्दर, सरस, सजीव, वैयक्तिक चरित्र व्यंजक कथोपकथन प्राप्त होते हैं । वर्माजी अपने सर्वप्रथम उपन्यास 'पतन' के पश्चात वह निरन्तर प्रयत्न करते आये हैं कि उनके उपन्यासों के कथोपकथनों में नवीनता, मौलिकता, तथा सुन्दरता की सृष्टि हो । फलतः 'भूले बिसरे चित्र' में जो शिल्पगत-सौदय दृष्टिगत होता है, वह उनके उपन्यास कला के विकास का स्वयं प्रमाण है । अतः यहां वर्माजी के विवेच्य उपन्यास के कथोपकथन-योजना का अध्ययन करना समीचीन होगा ।

(1) चरित्रोद्घाटन कथोपकथन :

उपन्यास के कथोपकथन चरित्रों का उद्घाटन करने में सक्षम हैं, उनसे संदर्भगत सभी विशेषताएँ इसमें प्राप्त होती हैं । कथोपकथन से पात्रों का चरित्र-उद्घाटन खुद-ब-खुद हो जाता है । इसका कारण यह हो सकता है कि उपन्यास के प्रायः सभी पात्र मानव-जीवन से सम्बन्धित हैं । उपन्यास के आरम्भ में ही मुंशी शिवलाल और उसके परिवार का चरित्रोद्घाटन बड़े स्वाभाविक एवं सजीव कथोपकथन द्वारा किया गया है जिससे मुन्शी शिवलाल की खुशामदी, विनोदी और बेईमानी प्रवृत्ति स्पष्ट

झलकती है । मुंशी शिवलाल का धार्मिक बाह्याडंबर देखिए -

मुंशी शिवलाल थोड़ी देर तक सोचते रहे, "बात तो ठीक कहेव । अबे मार लिया मैदान । खूब बात सूझी । देख घर माँ गंगाजल की जो बोतल है, तो चार बूँद गंगाजल दारु माँ छोड़ लीन्हेव । गंगाजल से सब कुछ शुध्द हुई जात है ।"[3]

मुंशी शिवलाल चाटुकार, बेईमान और स्वार्थि प्रवृ-त का प्राणी है, जबकि ज्वालाप्रसाद ईमानदार और स्वाभिमानी है । उनके चरित्रों के इस मूलभूत अन्तर को उपन्यास के आरम्भिक पृष्ठों में ही उनके संवादों के माध्यम से रेखांकित कर दिया गया है । एक उदाहरण अवलोकनीय है -

मुंशी शिवलाल ने ज्वालाप्रसाद से अपनी नजर हटाते हुए, कहा, "मैंने श्यामू के मुकदमें की बात की थी, बोले कि अगर ज्वालाप्रसाद कह दें कि उन्होंने सलीमा को रुपया दिया है तो वह रहमत खाँ का मुकदमा खारिज कर देंगे ।"

"लेकिन ---- लेकिन बप्पा, मैंने रुपया कब दिया है मुसम्मात सलीमा को । मै तो उसे जानता तक नहीं हूँ । इतना बड़ा झूठ तो मुझसे नहीं बोला जायगा ।"

"हूँ, यह ठीक है, लेकिन तुम इतना तो कह ही सकते हो कि तुमने श्यामलाल को जायदाद खरीदने के लिए रुपया दिया है । और श्यामलाल को जमीन खरीदने के लिए मैंने तुम्हारा रुपया दिया है, यह झूठ भी नहीं है । रुपया सलीमा की जमींदारी खरीदने के लिए दिया गया या उस जमीन को खरीदने के लिए दिया गया, इससे कोई मतलबअ नहीं ।"[4]

उसी प्रकार बरजोरसिंह की राजसी थाट, उसकी अहंमान्यता उदण्डता और अकड़ की अभिव्यक्ति उसके कथनों में प्रकट हुई है : "हाँ नायब साहेब। आज इस हाथी को भी अलग करने को तैयार हो गया था, अपनी जमीन बचाने के लिए । लेकिन कहता है कि हाथी बाँधना आसान है, खिलाना कठिन है । वह साला बनिया क्या हाथी पालेगा । तो लौट आये हम ।" यह कहते-कहते बरजोरसिंह जोर से हँस पड़ा । "लेकिन जीजा, हमसे न रहा गया, और हमने उसके दरवाजे पर थूककर कह दिया कि बनिये साले क्या हाथी पालें, हाथी तो पलता है हम राजकुल वालों के यहाँ ।"[5]

इस प्रकार उपन्यास के कथोपकथनों में चरित्रोद्घाटक कथोपकथनों की ही प्रधानता है । दो पात्रों के वार्तालाप से किसी तीसरे पात्र के चरित्रोद्घाटन प्रणाली का भी उपन्यास में कई स्थलों पर प्रयोग किया गया है । उदाहरण के लिए मीर जाफरअली और पण्डित सोमेश्वरद-त के निम्नांकित कथोपकथन अवलोकनीय हैं, जिसमें गंगाप्रसाद की व्यवितत्व की आलोचना तो कराई गई है ही, उसके निजी चरित्र का भी उद्घाटन होता गया है -

गंगाप्रसाद के वहाँ से हटते ही मीर जाफर अली ने कहा "देखा पण्डत सोमेश्वरद-त साहेब, आपने इस बरखुरदार को । क्या शान । क्या अकड़ । पूरे तल्लुकदारी ठाठ हैं इनके ।"

पण्ड़त सोमेश्वरद-त ने कुछ चुप रहकर उत्तर दिया, "बाप-बेटे में फर्क तो काफी है, लेकिन लड़का खानदानी है । यह गंगाप्रसाद दिल और हौसले वाला है मीर साहेब, यह तो आपको मानना ही पड़ेगा । नये युग का आदमी है, इस नई दुनिया में यह काफी आगे बढ़ेगा ।"

"जी, आगे बढ़ेगे खाक । इनकी ऐयाशी की शिकायते अभी से आनी शुरु हो गई हैं । खुदा जाने इसके ये अनाप-शनाप खर्चे कहाँ से और किस तरह पूरे होते हैं, क्यों कि इसकी रिश्वत लेने की शिकायत कतई कहीं से नहीं है । मैं आप से कहता हूँ पण्ड़तजी, किसी दिन चक्कर में पड़ जाएँगे यह बरखुरदार । आप बुजुर्ग आदमी हैं, इसके वालिद के दोस्त, तो जरा आप इन्हें समझाइएगा ।" मीर जाफर अली बोले ।

किशोरीरमण जोर से हँस पड़े, "जी, जलन होती है आपको मीर साहेब ? आप अपनी तमाम खुराफातों के साथ सहीसलामत रहेंगे, और यह गंगाप्रसाद चक्कर में पड़ जाएगा । क्यों पण्ड़तजी, आपका क्या खयाल है ?"

पण्डित सोमेश्वरद-त ने गम्भीरतापूर्वक कहा, "डॉक्टर, मीर साहेब ठीक कहते हैं । मीर साहेब और गंगाप्रसाद में फर्क इतना है कि गंगाप्रसाद साहसी भी है । अंग्रेजों में जो इसकी इतनी घुस-पैठ है, वह इसलिए कि वह उन अंग्रेजों से बराबरी के साथ मिलता है, बराबरी का बरताव करता है । लेकिन डॉक्टर, यही उसमें अवगुण भी है । यह आदमी खुशामद नहीं कर सकता, क्योंकि यह वीर है । और वीरता अपराध की जननी है, यह भी सत्य हैं, । हमारे मीर साहेब निहायत बुजदिल किस्म के आदमी हैं, इनका सुपरिण्टे-डेण्ट इन्हें, गालियाँ देता है, लेकिन क्या मजाल कि उनके चेहरे पर शिकन तक आ जाए । मीर साहेब हरदिल-अजीज हैं । और गंगाप्रसाद की अकड उसकी सबसे बड़ी दुश्मन है । गंगाप्रसाद के साथ मुसीबत यह है कि वह भीतर - बाहर एक है, जब कि मीर साहेब के भीतर-बाहर में जमीन-आसमान का अन्तर है । डॉक्टर साहेब, यह दुनिया निहायत दुरंगी है, आदमी दुरंगा होकर ही पनप सकता है ।"[6] इस प्रकार उपन्यास के कथोपकथन प्रत्येक चरित्र का उद्घाटन करने में निःसन्देह समर्थ एवं सार्थक सिध्द हुए हैं ।

(2) स्वाभाविकता :

आलोच्य उपन्यास में कथोपकथक का स्वाभाविक रुप दृष्टिगत होता है । कथोपकथन प्रायः पात्रानुकूल होने के कारण स्वाभाविक प्रतीत होते हैं । उपन्यास में आदयोपान्त सुन्दर, स्वाभाविक,

सजीव, प्रसंगानुकूल तथा व्यवहारिक कथोपकथन का समृध्द शिल्पगत - सौष्ठव उपलब्ध है । उपन्यास में पात्रों का व्यक्तित्व उनके संवादों से रुपायित हुआ है । इसीलिए पात्रों का कथन ही उनके व्यक्तित्व का द्योतक है, इसमें विविधता दृष्टिगत होती है । छिनकी की चुलबुलाहट हो या शिवलाल की खुशामद, जैदेई का प्रेम प्रसंग हो या गंगाप्रसाद की स्पष्टवादिता या संतो, मल्का की मानसिकता या ज्ञानप्रकाश सत्यव्रत या फरहतुल्ला के अकाट्य तर्क, सर्वत्र कथोपकथन की स्वाभाविक वृध्दि हुई है । छिनकी का चुलबुलापन, उसकी मिजाजी और स्पष्टवादिता उसके संवादों में फूट पड़ी है -

"आगी लागै ई नसा मां और नसा करें वालेन माँ । पीके बौराय जात हैं । लेव लै आईन, मुला अब हम होली की तरफ न जइबै ।"[7]

इस संदर्भ में कुछ और उदाहरण अवलोकनीय हैं -

चन्दनसिंह ने मुंशी शिवलाल की घबराहट ताड़ ली; उसने मुंशी शिवलाल को धीरज बँधाते हुए कहा, "डरैं की कौनो बात नाहीं है मुंसीजी, साहेब पेशकार साहेब से हँस-हँस के बतियाय रहे हैं, तुम पर नाराज नाहीं हैं ।"

मुंशी शिवलाल ने ऐंठकर कहा, "और अगर नाराजौ हुइ जाँय तो हमार का बिगाड सकत हैं । ईमानदारी के साथ मेहनत की रोटी खाते हैं और राम-नाम का भजन करते हैं ।"

कलक्टर अपने चैम्बर में बैठा हुआ पेशकार से उस दिन के अर्जी दावों को सुन रहा था और उन पर अपना हुकम लिखता जाता था । उसने मुंशी शिवलाल को देखते ही कहा, "वेल मुंशी, तुम बड़ा चलता-पुरजा आदमी है ।"

"हुजूर का इकबाल है । कौनसी खता हो गई इस नाचीज से ?" मुंशी शिवलाल बोले ।

कलक्टर ने पेशकार से भूपसिंह का इस्तगासा निकलवाते हुए कहा, "ठाकुर को बनिया ने पीटा और साँड ने बनिया को पटक दिया । बड़ा खुबसुरत लतीफा है । तुम समझता है हम इस बात पर यकीन कर लेगा ? ठीक-ठीक बतलाओ क्या मामला है ? वैसे हमने इस पर पुलिस की इनक्वायरी का हुक्म दे दिया है ।"

गला साफ करते हुए मुंशी शिवलाल ने कहा, "हुजूर जान बख्शो तो अर्ज करुँ ।"

कलक्टर उस दिन अच्छे मुड़ में था, मुस्कराते हुए कहा, "अच्छा हमने तुमको माफ किया, लेकिन सच'सच बोलना - झूठ एक लफ्ज नहीं ।"

"हुजूर, यह मैकूलाल बड़ा पाजी आदमी है। सैकड़ो किसानों को इसने तबाह कर दिया है। इससे कर्ज लेकर कभी कोई उरिन तो हुआ नहीं।"

"ओह। तो यह मैकूलाल महाजन बनिया है - अब हम समझा। तब तो यह वाकई बड़ा पाजी और बेईमान होगा। हाँ, फिर क्या हुआ ?"

"वही कह रहा हूँ हुजूर। तो यह भूपसिंह सीधा-सादा किसान है, लेकिन नातजुर्बेकार। यह मैकूलाल के चंगुल में फँस गया। अभी तक मैकूलाल इससे असल का तिगुना वसूल कर चुका है, लेकिन फिर भी बाज नहीं आता। मैकूलाल अब इसके घर और जमीन पर आँखे लगाए है। इस पर अगर भूपसिंह को गुस्सा आ गया हो तो कोई ताज्जुब की बात नहीं।"

"तो फिर इस्तगासा झूठा है ?" कलक्टर ने पूछा।

"हुजूर, झूठ-सच तो सबूत पर मुनहसिर है। इस नाचीज ने जो कुछ अर्ज किया वह इसलिए कि हुजूर ने मेरे मालिक की हैसियत से पूछा था, न कि अदालत की हैसियत से। हुजूर, बदमाश के साथ जब तक बदमाशी के साथ पेश न आया जाय तब तक उसकी अकल दुरुस्त नहीं होती।"[8]

वैसे तो पात्रों की मनःस्थिति की अनुकूलता की दृष्टि से प्रायः सभी कथोपकथन उपयुक्त हैं। उपन्यास में आये हुए छोटे-से-छोटे पात्रों के संवाद भी स्वाभाविक, सार्थक तथा उपयोगी सिद्ध हुए हैं। गंगाप्रसाद और ज्ञानप्रकाश के संवाद अधिकांशतः स्वाभाविक हैं। एक स्थान पर ज्ञानप्रकाश उसे अमृतसर कांग्रेस चलने का आग्रह करता है, इस प्रसंग पर उनके मजेदार किन्तु स्वाभाविक कथोपकथन अवलोकनीय हैं -

"इसमें कौन-सी ऐसी मुसीबत है। तुमने भैया को अभी तक अपना कोई कार्यक्रम तो बतलाया नहीं है। तुम जल्दी से आगरा, मथुरा, अलीगढ़ या मेरठ का कोई कार्यक्रम बना डालो। मान लो अलीगढ़ में तुम्हारे कोई पुराने दोस्त हैं।"

"हाँ अलीगढ़ में पण्डित सोमेश्वरदत्त हैं, बप्पा उन्हें जानते भी हैं" गंगाप्रसाद ने कहा।

"नहीं, पण्डित से काम नहीं चलेगा, क्यों कि भैया उन्हें जानते हैं, सब झूठ पकड़ा जाएगा। कोई ऐसा आदमी हो, जिसे भैया न जानते हों।"

गंगाप्रसाद ने कुछ सोचकर कहा, "मेरठ में कृष्णचन्द्र मिश्र हैं, असिस्टेण्ट सर्जन।"

"ठीक। तो तुम उन्हीं कृष्णचन्द्र के पुत्र के मुण्डन, कनछेदन आदि किसी काम में जा रहे हो।"

"उँह पूस के महीने में ये सब शुभ काम नहीं होते," गंगाप्रसाद ने कहा ।

"अजीब मुसीबत में डाल दिया है तुमने । अच्छा तो पूस के महीने में आदमी मर तो सकता है । मान लो तुम उनके पिता की मातमपुर्सी में जा रहे हो; इसमें तो कोई पख नहीं निकाल सकता ।"

"हाँ, तीन साल पहले उनके पिता की मृत्यु हुई थी ।"

"बस - बस । तो कह देना कि उनके पिता की मृत्यु एक साल पहले हुई थी, बरसी में शामिल होने जा रहे हो । छब्बीस तारीख को बरसी है, सत्ताईस को वह तुम्हें चलने नहीं देंगे, बहुत दिनों बाद मिले हो । लिहाजा आट्ठाईस को चलकर उनतीस को यहाँ पहुँच सकते हो । अब एकाध दिन की देर रास्ते में भी हो सकतीह है ।"[9]

इस प्रकार उपन्यास आद्योपान्त स्वाभाविक तथा प्रभावशाली कथोपथनों से भरा पड़ा है । वर्माजी को इसमें जो सफलता प्राप्त हुई है वह उनके उपन्यास कला की दृष्टि से विशेष सराहनीय है संक्षेप में लेखक स्वाभाविक कथोपकथन की सफलता अभिव्यक्ति में सफल हुआ है ।

3. **कथानक प्रगति और कथोपकथन** :

"कथोपकथन द्वारा कथानक का सहज स्वाभाविक विकास होता है । विगत घटनाओं की सूचना, वर्तमान स्थिति का परिचय तथा भविष्य की योजना पात्रों के परस्पर कथोपकथन द्वारा होती है । सुन्दर, उपयुक्त तथा मार्मिक कथोपकथन अतीत-वर्तमान की श्रृंखला ही नहीं जोड़ते अपितु उपन्यास में सौन्दर्य - सृजन करते हैं ।"[10] 'भूले बिसरे चित्र' में कथोपकथन के द्वारा कथानक का स्वाभाविक विकास हुआ है । उपन्यास पाँच भागों में विभाजित है और प्रत्येक भाग का आरम्भ और अन्त स्वाभाविक कथोपकथनों से हुआ है । उपन्यास का आरम्भ स्वाभाविक तथा रोचक कथोपकथनों द्वारा किया गया है, जो कथानक के स्वाभाविक - विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं -

1. मुंशी शिवलाल ने इस्तगासे को हाथ में लिया, "तौन वह इस्तगासा लिखा है ठाकुर, कि वह सार मैकूललवा सीधे पाँच साल के लि लद जाय ।"

   "अच्छा ।" आश्चर्य की मुद्रा के साथ ठाकुर भूपसिंह ने कहा, "तो फिर हमहू का जरा एक दफा सुनाय देव ।"[11]

2. कलक्टर इस उत्तर से हँस पड़ा, "तुम भी बड़ा पाजी आदमी है मुंशी, लेकिन हम तुमसे बहुत खुश हैं । हाँ, तुमने अपने लड़के ज्वालाप्रसाद की बाबत कहा था ।"

"हुजूर बड़े गरीबपरवर हैं । उस लड़के को हुजूर कानूनगो, अहलमद या नाजिर बना दें तो हुजूर हम लोगों की परवरिश हो जाय ।"

कलक्टर अब की बार जोर से हँसा, "वेल मुंशी, तुम भी क्या कहेगा, हमने तुम्हारे लड़के ज्वालाप्रसाद को नायब तहसीलदारी पर नामजद करवा दिया है ।"[12]

उपन्यास के प्रत्येक खण्ड में वर्तमान स्थिति का परिचय, भविष्य की योजना तथा देशकाल - परिवर्तन की सूचना पात्रों के परस्पर कथोपकथनों द्वारा दी गई है । उदाहरण के लिए तृतीय खण्ड में सम्मिलित पंडित सोमेश्वरदत्त का आरम्भिक कथन अवलोकनीय है --

1. "अब हम पूर्ण रूप से गुलाम हो गए । इंगलैंड का बादशाह दिल्ली में अपना दरबार करने आ रहा है, हिन्दुस्थान के राजे - महाराजे उसके सामने अपना सिर झुकाएँगे, उसको नजरें देंगे, उसका आधिपत्य स्वीकार करेंगे ।"[13]

2. "नहीं डॉक्टर, जो - कुछ हो रहा है वह अच्छा ही हो रहा है । किसी तरह इन म्लेच्छ यवनों का शासन तो अपने ऊपर से हटा, देश की अराजकता दूर हुई, जुल्मों से त्राण मिला, हर जगह अमन-आमान फैला । भला इसे बुरा कौन कह सकता है । लेकिन इस सबके साथ एक बात जरूर है - विदेशी हर हालत में विदेशी ही रहेगा ।"[14]

इस प्रकार यहाँ सोमेश्वरदत्त के संवादों के द्वारा लेखक अंग्रेजी शासन का पूरे हिन्दुस्थान पर आधिपत्य और दिल्ली दरबार के आयोजन की सूचना देता है, साथ-ही-साथ देशकाल के परिवर्तन का संकेत भी देता है । इतनाही नहीं यहाँ लेखक अतीत, वर्तमान और भविष्य की कड़ियों को स्वाभाविक रूप से जोडने में अपनी कलात्मक अभिव्यक्ति का परिचय भी दे देता है । उपन्यास में इस प्रकार के कथोपकथन स्थान - स्थान पर मिलते हैं, जिससे कथानक - प्रगति में गति और विकास में वृध्दि हुई है । इस संदर्भ में डा. बैजनाथ शुक्ल का कथन युक्तियुक्त है । उनके मतानुसार 'शिल्प की दृष्टि से 'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास के कथोपकथन उत्कृष्ट कोटि के हैं । यह कथोपकथन एक ओर तो कथानक को गति प्रदान करते हैं, दूसरी ओर प्रत्येक खण्ड की कथा में देश काल परिवर्तन की अभिव्यंजना करते हैं ।"[15]

4. तथ्योद्घाटन कथोपकथन :

उपन्यास में तथ्योद्घाटन कथोपकथन भी यदा-कदा प्राप्त होते हैं । इसके अन्तर्गत छिनकी, ज्वालाप्रसाद, बिशनलाल, ज्ञानप्रकाश, फरहतुल्ला, गंगाप्रसाद और नवल आदि के मध्य हुए वार्तालापों को रखा जा सकता है । राधेलाल और बिशनलाल के निम्नांकित संवादों से इस तथ्य का उद्घाटन किया गया है कि श्यामलाल ने बेईमानी और धोखाधड़ी से बेवा सलीमा का मौजा अपने नाम कर लिया है --

राधेलाल ने गला साफ करते हुए कहा, "बात यह है कि वह मौजा रहीमपुरा जो है न, फतहपुर के पास, तो गफूर मियाँ की बेवा से श्यामू ने उसका हिस्सा आठ आना यानी आधा मौजा खरीद लिया है । श्यामू के नाम उसका बैनामा हो गया है और उसने उस पर कब्जा भी कर लिया है ।"

बिशनलाल ने टोका, "ज्वाला दादा, यह सब धोखाधड़ी है । सलीमा चाची को अफीम खिला - खिलाकर श्यामू दादा ने उसके अँगूठे का निशान एक कोरे दस्तावेज पर करा लिया और उस पर खिल लिया कि वह अपनी जायदाद श्यामू के नाम हिबा कर रही है । इस पर रहमत खाँ ने श्यामू दादा पर मुकदमा दायर किया है, मुकदमा चल रहा है ।"[16]

इस संदर्भ में और एक उदाहरण द्रष्टव्य है, जब मीरसाहेब ज्वालाप्रसाद के ईमानदारी पर शक करते हैं, तो ज्वालाप्रसाद उन्हें वास्तविकता का बोध करा देता है ।

उस धूमिल और ठंडे वातावरण को मीर साहेब के स्वर ने तोड़ा । वह बोले, "बरखुरदार, सौ अशर्फियों की रकम बहुत बड़ी रकम होती है । और ये सौ अशर्फियाँ तुम्हारे पास थीं, मुझे इस पर अचरज हो रहा है । तुम्हारे वालिद को मैं जानता हूँ, इसलिए तुम्हारे खानदान का मुझे कुछ अन्दाज है । मैं यह जानता हूँ कि तुम रिश्वत नहीं लेते और जो आदमी रिश्वत नहीं लेता वह आदमी किसी गैर को दया-दान की शक्ल में इतनी बड़ी रकम नहीं दे सकता ।"

ज्वालाप्रसाद ने यह स्पष्ट अनुभव किया कि मीर साहेब के शब्दों में सत्य बोलने का आमन्त्रण है । ज्वालाप्रसाद के अन्दरवाला सत्य फूट पड़ा, "हुजूर, वे अशर्फियाँ मेरी नहीं थीं, नम्बरदारिन जैदेई ने बरजोरसिंह की बेवा को दिलाई थी कि वह उन रूपयों से अपनी जमीन वाला कर्ज अदा करके अपनी जमीन वापस ले ले ।"[17]

5. विचार - विनिमय कथोपकथन :

उपन्यास के पात्र कथोपकथन द्वारा परस्पर विचार-विनिमय करते हैं । "विचार - विनिमय मूलक कथोपकथन जहाँ शिल्पगत - सौंदर्य की वृध्दि करते हैं, वहीं इनके बाहुल्य में उपन्यास नीरस तथा प्रभावहीन हो जाने के कम अवसर नहीं होते हैं । शिल्प की दृष्टि से इस प्रकार के कथोपकथन श्रेष्ठ समझे जाते हैं जिनमें कलात्मक सौन्दर्य हो और प्रचारात्मकता का अभाव हो।"18 अलोच्य उपन्यास में भी कुछ स्थलों पर ऐसे कथोपकथन प्राप्त होते हैं, जिसमे पात्रों की विचारधारा और उपन्यासकार के दृष्टिकोण से अवगत हुआ जा सकता है । उदाहरण के लिए मुंशी शिवलाल और राधेलाल के निम्नांकित संवाद अवलोकनीय हैं --

मुंशी शिवलाल ने कहा, "लेकिन रूपया कहाँ से आएगा ? कितना चाहते हैं कयूम मियाँ अपने हिस्से का ?"

"जी वैसे बैनामा वह आठ हजार में करेंगे, लेकिन बैनामे के साथ वह चार हजार चाहते हैं, बाकी चार हजार हम उन्हें तीन साल में दे देंगे, वह इस पर राजी हैं ।"

"और यह चार हजार रूपया कहाँ से आएगा ?" मुशी शिवलाल ने पुछा ।

"और यह चार हजार ------ यह कहाँ से आएगा ?" उत्तर न मिलने पर मुंशी शिवलाल ने फिर पूछा ।

"जी - जी ।" राधेलाल ने हिचकते हुए कहा, "एक हजार रूपया तो मैं जोड़ - बटोरकर इकट्टा कर लूँगा, और एक हजार रूपये तक का कर्ज हम लोगों को फतहपुर में ही मिल जाएगा । बाकी दो हजार रूपये का इन्तजाम ज्वाला को करना पड़ेगा । दो हजार की ही बात तो है । जमींदार ज्वाला के नाम खरीदी जाएगी ।"

"और गफूर मियाँ वाला हिस्सा । उसके मुकदमेबाजी का खर्च वगैरह ?"

"जी, श्यामू वह हिस्सा भी ज्वाला के नाम लिख देगा । ज्वाला के नाम रहीमपुर के मुसल्लम मौजे की लिखा - पढ़ी हो जाएगी और ज्वाला की जमींदारी के मामले में पण्डित गिरिजाशंकर अपना फैसला हम लोगों के हक में ही देंगे ।"

मुंशी शिवलाल को यह प्रस्ताव पसन्द आया । "ज्वाला आ जाए तो मैं उससे बात - चीत करूँगा । अगर उसके पास रूपया न होगा तो वह कहीं से कर्ज ले लेगा । लेकिन दो हजार रूपाये का इन्तजाम तुम्हें करना होगा, वह तो हो जाएगा न ?"

"जी, एक हजार तो मेरे जिम्मे, वह मैं एक हफ्ते में इकट्ठा कर लूँगा, और एक हजार के लिए मैंने लाला रामकिशोर से बात कर ली है । लाला रामकिशोर राजी हैं । तहसीलदार के खानदान की एक इज्जत होती है दादा ।"[19]

उपन्यास में नवल और प्रेमशंकर के संवाद विचार - विनिमय कथोपकथन के लिए विशेष उल्लेखनीय हैं । साथ - ही साथ गंगाप्रसाद, फरहतुल्ला, ज्ञानप्रकाश, नवल, विद्या, उषा, ज्वालाप्रसाद, भीखू, प्रभुदयाल, सत्यव्रत आदि के संवादों में उनकी विचारधारा का संचरण हुआ है । यह विचारमूलक कथोपकथन लेखक के दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए कथानक के विकास में रोचकता, प्रभावान्विति तथा स्वाभाविकता लाने में सक्षम हैं । उपन्यास में अधिकतर विचार - विनिमय कथोपकथन राजनीति से सम्बन्धित हैं ।

6. **नाटकीय कथोपकथन** :

'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास आद्योपान्त नाटकीय संवादों से भरा पड़ा है । इसके अन्तर्गत पृष्ठ - 365, 434, 463, 464, 457-58-59-60-61-62, 680-81, 707 आदि में सम्मिलित कथोपकथन अवलोकनीय हैं । उदाहरण के लिए संतो के निम्नांकित कथोपकथन अवलोकनीय हैं --

"संतो मुस्कराई, "क्या देख रहे आप ? कहीं कोई नहीं है और जब तक मैं किसी को बुलाऊंगी नहीं, कोई इस कमरे में आएगा भी नहीं । लेकिन इतना मैं बतला दूँ, आज इस समय मेरा अपने ऊपर पूरा अधिकार है ।"

गंगाप्रसाद के अन्दर वाला पशु अब बहुत उत्तेजित हो गया था; वह एकाएक उठकर खड़ा हो गया ।

संतो भी उठकर खड़ी हो गई । उसके मुख वाली मुस्कान उसी तरह स्थित थी, "नहीं गंगा बाबू, वहीं बैठ जाइए । अभी आपने नाश्ता खत्म नहीं किया है ।"

पर गंगाप्रसाद अब अपने को पूरी तौर से खो चुका था । उसने झपटकर संतो को अपने आलिंगन - पाश में कस लिया । उसीके साथ एक तमाचा उसके गाल पर पड़ा और साथ ही संतो की दृढ़ता से भरी आवाज में सुनपाई पड़ा, "मुझे छोड़ दीजिए, नहीं तो मैं अभी नौकर को बुलाती हूँ।

गंगाप्रसाद ने सहमकर संतो को छोड़ दिया । संतो की मुस्कराहट फिर वापास आ गई,

बैठकर नाश्ता कर लीजिए ।"

गंगाप्रसाद लज्जित - सा चुपचाप सिर झुकाकर बैठ गया, पर उससे अब खाया नहीं गया संतो कुछ देर तक एकटक गंगाप्रसाद को देखती रही, फिर उसकी आँखों में आँसू आ गए, "मुझे माफ करना । जी होता है इस हाथ को आग में झुलसा दूँ । तुम्हें मेरी सौगन्ध, नाश्ता कर लो, मुझ पर नाराज मत होना मैं बड़ी अभागिन हूँ, बड़ी अभागिन हूँ ।" और यह कहते - कहते संतो की हिचकियाँ बँध गई ।"[20]

एक और उदाहरण दृष्टव्य है --

लाला प्रभुदयाल ने अपना रिवाल्वर निकाला और कसकर पकड लिया । तब बरजोरसिंह उनकी बहल के पास आ गया । वह निहत्था था, लेकिन उसका चेहरा तमतमाया हुआ था । उसने आते ही कहा, "तो दाखिल - खारिज करा आए लाला परभूदयाल ।ममालुम होता है मौत सर पर मँड़रा रही है ।"

"क्या बकते हो, जरा होश की बात करो ।" लाला प्रभुदयाल ने कड़े स्वर में कहा ।

प्रभुदयाल के हाथ वाला रिवाल्वर बरजोरसिंह की नजर में पड़ा, "अच्छा, तो तमंचा लेकर घुम रहे हो । लेकिन लाला परभूदयाल, यह तमंचा बनियों को शोभा नहीं देता ।" यह कहकर बरजोरसिंह ने बड़ी निर्भीकतापूर्वक एक झटके के साथ रिवाल्वर उनके हाथ से छीन लिया । प्रभुदयाल भय से चीख पड़े, उनका चेहरा पीला पड़ गया । सीतलप्रसाद और लच्छीराम हाथ जोड़कर गुम - सुम बैठ गए । "डरो मत लाला, हम तुम्हें मारेंगे नहीं, लेकिन हमें तुमसे इतना ही कहना है कि हमारी जमीन पर कब्जा तुम जिन्दा रहते तो पा नहीं सकते और तुम्हारे मरने के बाद यह कब्जा तुम्हारे लिए बेकार होगा । तो हमारी जमीन पर कब्जा करने की बेवकूफी न कर बैठना।"[21]

7.. **प्रसंगानुकूल तथा भावानुरूप कथोपकथन** :

'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास में प्रसंगानुकूलता और भावनुरूपता का गुण भी प्रचुर मात्रा में है । इसके प्रायः सभी संवाद पात्रों की मनःस्थिति और प्रसंग के अनुरूप हैं । चाहे मृत्यु प्रसंग हो, चाहे पारिवारिक झगड़ा हो या राजनीतिक बहस और तर्क-वितर्क हो, लेखक ने प्रायः सर्वत्र प्रसंग का ध्यान रखते हुए भावानुरूप कथोपकथन का निर्माण किया है । निम्नांकित उदाहरण में मिस्टर हेरिसन की उदंड़ता और गंगाप्रसाद की निर्भयता और स्पष्टवादिता प्रसंगानुकूल और भावानुरूप है --

मिस्टर हेरिसन का जोश और भी बढ़ा, "वह आग बुझ गई । आज मैं आप लोगों को यह बातलाना चाहता हूँ कि मैंने यह पार्टी उस वहशी गद्दार के जेल जाने की खुशी में दी है ।

गंगाप्रसाद ने अपने साथी हिन्दुस्तानियों की ओर देखा । किसी के माथे पर शिकन नहीं थी इस आदमी की बदतमीजी के कारण । अब उससे न रहा गया, "मिस्टर हेरिसन, अगर आपने पहले से अपने इस डिनर की नीच और नापाक भावना का जिक्र कर दिया होता तो कम - से - कम मैं तो इस डिनर में सम्मिलित न होता, और शायद यहाँ आनेवालों में चार - छः आदमी और भी न होते ।"

डिनर में आमन्त्रित सभी अतिथि गंगाप्रसाद की इस बात से चौंक उठे । मिस्टर हेरिसन कानपुर के बहुत बड़े पूँजीपति और मिल - मालिक थे, और उनका कहना था कि वे इंग्लैण्ड के किसी ऊँचे लार्ड खानदान के हैं । फिर मिस्टर हेरिसन अपने उग्र स्वभाव के लिए प्रसिध्द भी थे । उनका मुख तमतमा उठा, गंगाप्रसाद की इस बात से, "तो क्या आप उस बदमाश, लुच्चे, झूटे और फरेबी गाँधी को महात्मा समझते हैं ?"

अकारण ही हेरिसन की इस गाली - गलौज से गंगाप्रसाद और अधिक भड़का, "मिस्टर हेरिसन, यह तुम्हारा कमीनापन और लुच्चापन है, जो तुम उस महापुरूष को गालियाँ दे रहे हो । हम लोग उसकी राजनीति से भले ही सहमत न हों, लेकिन उसकी महत्ता, ईमानदारी और शराफत से कोई इन्कार नहीं कर सकता ।"

हेरिसन उठ खड़ा हुआ, "तुम मुझे लुच्चा और कमीना कहते हो, तुम काले आदमी । हम लोगों ने जो तुम्हे मुँह लगाया, उसका यह नतीजा ! फिर से कहना, मैं तुम्हारा मुँह तोड़ दूँगा ।"

गंगाप्रसाद भी अपनी आस्तीन चढ़ाता हुआ उठ खड़ा हुआ, "तुम लुच्चे हो, तुम कमीने हो, तुम हरामजादे हो ।"[22]

४. **<u>रोचकता, सजीवता तथा मार्मिकता के संदर्भ में कथोपकथन की अनुकूलता</u>** :

अलोच्य उपन्यास कथोपकथनों से भरा पड़ा है । इसके लगभग सभी कथोपकथन रोचक, सजीव, मार्मिक तथा प्रभावात्मक बन पड़े है । इस संदर्भ में कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं --

1. श्यामलाल की पत्नी ने घिघियकर उत्तर दिया, "काहे का हमें गाली खिलावा चाहती हो ? बप्पा केर मिजाज तो जनती ही हो, और अम्माजी को तो हम फूटी आँखिन नाहीं सुहइत । जी माँ आवत है कि ई चुड़ेल बुढ़िया का कौनो दिना जमीन पर पटकिके ऐस कचरी कि

जिंदगी - भर के लिए जुबान बन्द हुई जाय।"

यमुना के मुख पर मुस्कराहट आई, "राम ! राम ! मझली, सास के लिए कहुँ ऐस कहा जात है ?"

श्यामलाल की पत्नी की आँखों में आँसू आ गए, "का करी जीजी । यहै की कौनो हद होती है । परान पक गए हैं ई घर के बरताव से । कौनो दिन मट्टी का तेल ऊपर डाल के आगी लगाव लेब । लेकिन मरन के पहिले ई बुढ़िया के परान लै लेब, इतना नीक तरह से समुझ ले घ।"[23]

2. यमुना ने करुण भाव से कहा, "तू नहीं समझेगी बेटी, कम-से-कम अभी नहीं समझेगी । हाय, यह सब क्या हो गया ।"

"दादी, कोई नई बात नहीं हुई । यह सब तो होता ही रहता है । इसमें किसी का कोई दोष नहीं है; यह भगवान की लीला है । मुझे आज कितनी प्रसन्नता हुई यह सुनकर ।"

यमुना कराह उठी, "बेटी, अपनी जबान से कह दे कि तूने मुझे छमा कर दिया ।"

रुक्मिणी ने विद्या से कहा, "कह क्यों नहीं देती विद्या ? अम्माँजी को शान्ति मिलेगी ।"

विद्या ने यमुना का हाथ दबाकर पकड़ लि , "दादी, भगवान इस बात का साक्षी है कि तुम सब लोगों ने जो-कुछ किया वह मेरे भले के लिए किया । यहाँ तक कि मेरे लिए तुम लोगों ने अपने को तबाह कर लिया । अगर तुम्हारे अनजाने मेरा कुछ अहित हो गया हो, तो मैंने तुम्हें क्षमा कर दिया । तुम अच्छी हो जाओ दादी, भगवान् से यही प्रार्थना है ।"[24]

एक और मार्मिक कथोपकथन अवलोकनीय है --

दानसिंह ने रोते हुए कहा, 'तेरी सिर की सौगंध खाकर कहता हूँ रूक्मा, मैं तुझे पाने नहीं आया था; मैं तो तुझे भूलने यहाँ आया था । ये महाराज मिल गए, तो इन्होंने तेरी बाबत पूछा । इन्होंके कहने से इनके साथ यहाँ आया हूँ । मुझे छमा कर दे ।"

"नहीं रे दाना, रो मत, अपने आँसू पोंछ ड़ाल । तू क्यों छमा माँग रहा है; तूने कोई अपराध नहीं किया है । यह सब तो भगवान की मर्जी है ।" इस बार वह गंगाप्रसाद की ओर मुड़ी, "सुनो महाराज, तुम लोग बड़े अफ़सर हो और मेरा मालिक भी बड़ा अफ़सर है । तुम लोगों का तो कुछ बिगड़ेगा नहीं, लेकिन तुम लोगो के बीच में यह बिचारा दाना बेमौत मर जाएगा । तुम लोग दया करके जाओ यहाँ से और देख दाना, अब फिर कभी मत मिलना । अगले जनम तक राह देख; फिर हम दोनों मिलेंगे । जा कुन्ती से ब्याह कर ले, और अपने बापू का हाथ बटा जाकर । मुझे मेरे भाग पर छोड़ दे ।"[25]

उपन्यास में अन्तिम पृष्ठों पर रोचक और मार्मिक कथोपकथनों की अभिवृध्दि हुई है । इसमें नवल - उषा - विद्या, ज्वालाप्रसाद - भीखू आदि के संवाद विशेष उल्लेखनीय हैं । उपन्यास में पुरूष पात्रों की अपेक्षा स्त्री पात्रों के कथोपकथन अधिक रोचक, मार्मिक, सजीव तथा प्रभावशाली बन पड़े है । इसका कारण शायद यही हो सकता है कि उनकी भाषा बोझिल न होकर सहज, स्वाभाविक बोलचाल की भाषा है । कुल मिलाकर इन कथोपकथनों से उपन्यास शिल्प की अभिवृध्दि हुई है, इसमें दो मत की सम्भावना नहीं हो सकती है ।

9. <u>हास्य - व्यंग्यपूर्ण कथोपकथन</u> :

उपर्युक्त विशेषताओं के साथ - साथ बहुत से कथोपकथनों में हास - परिहास और व्यंग्यात्मकता का पुट उपलब्ध होता है, जिसके कारण कथोपकथन शिल्प में रोचकता, सजीवता, सरसता तथा प्रभावात्मकता में सराहनीय वृध्दि हुई है । डा. बैजनाथप्रसाद शुक्ल के शब्दों में कहें तो, "भूले बिसरे चित्र' का व्यंग हँसी से ओत - प्रोत होने के कारण मार्मिक है ।"[26] इस संदर्भ में कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य हैं, जिन्हें पढ़कर हमारा मन गुदगुदा उठता है तो कहीं हम वक्ता की हाजिर - जबाबी की सराहना करते हैं, ---

1. मीर साहेब सोमेश्वरदत्त से कहते हैं - "पण्डतजी, जरा होश की दवा कीजिए । ये घोतीपरसाद दुनिया फतह करेंगे ? मरने से पहले जो चींटी के पर निकलते हैं, ठीक उसी तरह हिन्दू धरम में यह आरियासमाजी पैदा हुआ है ।"[27]

2. मीर साहेब - "डेविड़ साहेब, लहजे में अभी थोड़ा - बहुत देसीपन बाकी है; कुछ थोड़ी - सी मश्क और करनी पड़ेगी, तब कहीं एंग्लो इण्डियन का मुकाबदला कर पाओगे ।"[28]

3. घुण्डी स्वामी - "अबे इतने चरस की बात चलाता है, एक साँस में मैं तेरा यह गरबा फूँक दूँ, समझा क्या रखा है तूने ।" और घुण्डी स्वामी ने बचनू साह की ओर देखा; "अबे ओ बचनू के बच्चे । देख क्या रहा है ? चवन्नी का चरस और ले आ । तुम भक्तों को तो अभी मिला ही नहीं ।"[29]

4. गेंदालाल ज्ञानप्रकाश से कहता है - "जीअभी से सहयोग लीजिए, और हम लोगों को खत्म करके रख दीजिए । जहाँ बैठने का अधिकार भी लोग हमें न दें, वहाँ बातचीत ही क्या होगी ? आन्दोलन कीजिए, स्वराज लीजिए, लेकिन हम लोगों को जिन्दा रहने दीजिए । हम लोक तो आप लोगों की गुलामी करने के लिए ही पैदा हुए हैं ।"[30]

10. **प्रतीकात्मक कथोपकथन** :

प्रतीकात्मक कथोपकथन औपन्यासिक सौष्ठव की वृध्दि करते हैं, जिससे कथोपकथन का प्रभाव द्विगुणित हो जाता है । 'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास में प्रतीकात्मक कथोपकथन का प्रयोग हुआ है । यह कथोपकथन प्रासंगिक, सुन्दर, सजीव तथा हास्य - रस से ओत - प्रोत हैं । कुछ उदाहरण अवलोकनीय हैं -

1. ज्ञानप्रकाश हिन्दू - मुस्लिमों को भाई-भाई मानता है और मुसलमानों का धर्म-गुरू तुर्की खलीफा है । इस तरह वह हिन्दूओं का भी रिश्तेदार हुआ, जब कि ब्रिटिश सरकार ने तुर्की के खलीफा के साथ विश्वासघात किया । इस पर हिन्दुओं को क्रोध भले ही न हो, दुःख तो होना ही चाहिए इसी भावना को प्रतीकात्मक ढंग से समझाते हुए वह गसंगाप्रसाद से कहता है : "अमा बड़े बुध्दू हो यार बरखुरदार । मान लो तुम्हारे भाई के ससुर, साले, सास, सलहज, साली, साढ़ू इनमें से किसी की मौत हो जाए ।"

गंगाप्रसाद ने ज्ञानप्रकाश की बात काटी, "मेरे कोई भाई नहीं है, यह तो तुम जानते ही हो चचाजान ।"

"हाँ-हाँ जानता हूँ कि तुम्हारे कोई भाई नहीं है । लेकिन मान लो कि तुम्हारे कोई भाई हो ।"

"कैसे मान लूँ ? कह दिया और मान लूँ ? भला सोचो तो कि इस बेसिर - पैर की बात को कैसे मान सकता हूँ । जरा यह समझाने की बात है ।"

"सब समझ लिया है, अब सीधी तरह से बात पर आओ और जो कुछ कह रहा हूँ उसे ठीक तौर से समझने की कोशिश करो," ज्ञानप्रकाश ने कडे स्वर में कहा।

"अरे नाराज हो गए चचा । थूक डालो इस गुस्से को, माफी माँगता हूँ । हाँ, तो मान लिया कि मेरे एक भाई हैं और उस भाई के साले, ससुर, सलहज, सास यानी कि उसकी बीवी की तरफ के किसी आदमी या औरत की मौत हो जाए ---- ।"

"यही कह रहा था मैं । हाँ, फिर ऐसी हालत में तुम मातमपुरसी के लिए जाओगे कि नहीं ?"

"यह तो इस बात पर निर्भर है कि भाई कितना नजदीकी है, यानी भाई के साथ मेरे ताल्लुकात कैसे हैं ?" 31

यहाँ मुसलमान के लिए भाई और तुर्की खलीफा के लिए भाई का रिश्तेदार याने मुसलमानों का धर्म-गुरु, प्रतीकात्मक रुप में लिए है।

2. मुंशी शिवलाल ज्वालाप्रसाद को झूठ बोलने की सलाह देते हैं तो ईमानदार ज्वालाप्रसाद उन्हें प्रतीकात्मक जवाब देता है : "जी युधिष्ठिर का कथन है कि अश्वत्थामा मारा गया, नर है या कुंजर।"

मुंशी शिवलाल ने तीखे स्वर में कहा, "महाभारत की कथा यहाँ नहीं लागू होती।"

"जी हाँ, यह कलियुग है। फिर मेरे रथ का पहिया जमीन से ऊपर उठकर चलता भी नहीं कि वह जमीन से लग जाएगा। सब-कुछ जानता हूँ, लेकिन सरकार का ऊँचा हाकिम होने के नाते मैं झूठ तो नहीं बोल सकूँगा। और जहाँ तक अर्द्धसत्य का सवाल है वहाँ पण्डित गिरिजाशंकर द्रोणाचार्य नहीं हैं कि हथियार डालकर बैठ जाएँ। वह हैं सदरआला। वह जिरह करेंगे और उसमें यह अर्द्धसत्य आसानी से पूरा सत्य बन जाएगा, क्योंकि झूठ मैं बोलूँगा नहीं।" [32]

इस प्रकार यहाँ युधिष्टिर, अश्वत्थामा, नर या कुंजर, रथ का पहिया, जमीन, हाकिम, द्रोणाचार्य, हथियार आदि शब्द प्रतीकात्मक रुप में लिए गये हैं। इन सांकेतिक प्रतीक-योजना से ज्वालाप्रसाद और मुंशी शिवलाल के अन्तर्बाह्य प्रवृत्तियों का उद्‌घाटन किया गया है। अतः यह सांकेतिक प्रतीक-योजना सोद्देश्य है।

11. आत्मगोपन कथोपकथन :

मानव-जीवन के अन्तर्बाह्य रुप में काफ़ी विभिन्नता होती है। वह जो जीवन के महान संघर्षों में अनुभव करता है, उसे व्यक्त नहीं करना चाहता। यही कारण है कि उपन्यासों में ऐसे कथोपकथन दृष्टिगत होते हैं, जिनमें उमड़ते हुए भावों को रोक कर पात्र कृत्रिम ढंग से वार्तालाप करते हैं। कभी-कभी ऐसे पात्र भी मिलते हैं, जो सामान्य अर्थ की बातचीत को भिन्न अभिप्राय प्रदान करते हैं। 'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास में भी इस प्रकार के कथोपकथन प्राप्त होते हैं। जैसे कैलासो के प्रति गंगाप्रसाद के मन में कोई आकर्षण या भावना नहीं है किन्तु वह उसे प्रकट न करके उसकी झूठी प्रशंसा करते हुए कहता है : "अब तो राजधानी दिल्ली हो गई है। बड़े लाटसाहेब दिल्ली पहुँच गए। वहाँ अब आप कोशिश कीजिएगा। न आप संतो से कम सुन्दर हैं और न कम सरस। भला संतो कौन-सा मुँह लेकर आपका मुकाबला करेगी।" [33]

एक स्थान पर नवल उषा को अपने जीवन से दूर जाते देख अन्यमनस्क रहता है। उषा

और ज्ञानप्रकाश नवल को उसके उदासी का कारण पूछते हैं, तो वह अपने मन का चोर छिपाकर कृत्रिम संवाद करता है -

इसी समय नवल ने कमरे में प्रवेश किया। उसका चेहरा सफेद पड़ गया था। विद्या ने उसे देखते ही कहा, "अरे दादा क्या बात है ? तबीयत तो ठीक है ?"

नवल ने कुरसी पर बैठकर आँखे बन्द कर ली, "हाँ तबीयत ठीक है। एक गिलास पानी पिला दो विद्या।"

पानी पीकर नवल स्वस्थ हुआ। ज्ञानप्रकाश ने पूछा, "क्यों, क्या बात है ?"

एक रुखी मुस्कान के साथ नवल बोला, "कुछ नहीं ज्ञान बाबा। अभी थोड़ी देर पहले एक दुःस्वप्न देखा था ; उससे मन को एक झटका-सा लगा। लेकिन वह सपना आया और चला गया अब मैं बिलकुल ठीक हूँ।"

"यह दिन के समय जागते हुए कैसा सपना ?" ज्वालाप्रसाद ने पूछा।

"ऐसे ही हँसी कर रहा था," नवल ने बात टाली। [34]

12. <u>संक्षिप्त कथोपकथन</u> :

शिल्प की दृष्टि से संक्षिप्त कथोपकथन का विशेष महत्त्व होता है। किन्तु इसके साथ-साथ यह आवश्यक है कि पात्रों द्वारा किया गया वार्तालाप उनका ही प्रतीत होना अत्यावश्यक है। आलोच्य उपन्यास में लघु कथोपकथन का अभाव महसूस होता है। उपन्यास में एकाध स्थान पर ही लघु कथोपकथन प्राप्त होते हैं। इस संदर्भ में निम्नांकित उदाहरण द्रष्टव्य है -

विद्या से रहा न गया। उसने नवल को पुकारा, "दादा।"

नवल जैसे चौंक पड़ा। "तुम विद्या, बाबूजी की तबीयत कैसी है ? सो रहे हैं या जाग गए ?"

"नींद उन्हें आती ही कहाँ है।" विद्या बोली, "तेज बुखार की बेहोशी, यही उनकी पलकों में भर जाती है।"

"कौन है इस वक्त बाबूजी के कमरे में ?"

"दादी है ; अम्माँ खाने का इन्तजाम करने चली गई है।"

"तो फिर चलूँ वहाँ, देखूँ क्या हाल है ?"

"बैठो भी दादा, हालत वैसी ही है। हाँ तो परीक्षा पूरी दे ली ?" [35]

13. पात्रों की भाव-भंगिमाओं का संकेत :

'भूले बिसरे चित्र' की संवाद-योजना के विषय में यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि, लेखक विभिन्न पात्रों की भाव-भंगिमाओं का इंगित करता गया है, जिससे उनकी मुख विकृति या आंगिक-चेष्टाओं से उनके कथनों की स्पष्टता और मार्मिकता में तो सराहनीय अभिवृध्दि हुई ही है साथ ही उपन्यास में नाटकीयता का भी अभिनिवेश हो गया है। उपन्यास में इस प्रकार की टिप्पणियाँ प्रायः प्रत्येक पृष्ठ पर विद्यमान है:- मुंशी शिवलाल ने ऐंठकर कहा, गला साफ करते हुए मुंशी शिवलाल ने कहा, गंगाप्रसाद झुँझलाहट के स्वर में बोला, ज्वालाप्रसाद ने कुछ भावुकता के स्वर में कहा, किशनलाल ने खीस निपोरते हुए कहा, अलीरजा का दम फूल रहा था और उसकी जबान लड़खड़ा रही थी, उषा ने अन्यमनस्क भाव से कहा, कैलासो के मुख पर एक खिसियाहट सी आ गई, नवल ने अपने आँसुओं को दबाते हुए कहा, नवल पागल की भाँति हँस पड़ा, ज्वालाप्रसाद का गला रुंध गया, छिनकी की आँखों में आँसू आ गए, ज्वालाप्रसाद ने उत्तेजित होकर कहा, ज्वालाप्रसाद ने दबी जबान से कहा, यमुना ने बिगड़कर कहा, उषा ने कड़े स्वर में कहा आदि।

कथोपकथन की शिल्पगत दुर्बलता :

'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास की कथोपकथन-योजना में उपर्युक्त गुणों का समावेश होने पर भी वह सर्वथा निर्दोष नहीं है। उपन्यास के कुछ पात्र, जैसे-गंगाप्रसाद, ज्ञानप्रकाश, फरहतुल्ला, गलका, संतो, लाल रिपुदमनसिंह आदि यदा-कदा जब वार्तालाप आरम्भ करते हैं तो दूसरे पात्र को भाषण-सा देते रहते हैं। उनके कथनों से संक्षिप्ति तो विलुप्त होती ही है, साथ ही स्वाभाविकता में असंगति आ जाती है। शिल्प की दृष्टि से वह वार्तालाप विशेष रुप से नहीं खटकता, जिसमें वार्तालाप अस्वाभाविक न प्रतीत हो परन्तु यदि वार्तालाप पात्र के स्तर का न होकर उपन्यासकार के स्वर-सिध्दान्तों और निश्चयों का प्रतीक बनकर आता है तो वह उसकी दुर्बलता है। अस्वाभाविक वार्तालाप में जीवन का स्पन्दन नहीं हो पाता। अतः कथोपकथन की दृष्टि से जो सम्भावित दोष इस उपन्यास में आ जाते हैं, उनका अध्ययन करना ही समीचीन होगा।

अस्वाभाविकता :

उपन्यास के लगभग सभी कथोपकथन स्वाभाविक हैं परन्तु जहाँ कहीं वर्माजी ने पात्रों के द्वारा अपने सिध्दान्तों की प्रतिष्ठापना करने का प्रयास किया है वहां वह अपने को इस दोष से मुक्त नहीं कर पाये हैं। उपन्यास के पात्र, गंगाप्रसाद, ज्ञानप्रकाश, फरहतुल्ला, लाल रिपुदमनसिंह आदि के माध्यम से लेखक ने अपने धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और व्यावहारिक तर्कों,

सिद्धान्तों को (जो पृष्ठ - 359, 494-95, 523-24, 532-33, 552 आदि में सम्मिलित हैं) उपस्थित करता है। कथोपकथन की दृष्टि से प्रथम तीन खण्डों में लेखक को बेहद सफलता प्राप्त हुई है किन्तु इसके अंतिम दो खण्डों में ही कथोपकथन की यह शिल्पगत दुर्बलता दिखाई देती है।

लम्बे-लम्बे संवाद :

मनुष्य मात्र का गुण है कि वह अपने विचार भाषा के माध्यम से प्रस्फुटित करता है। अपने विचारों को स्पष्ट अभिव्यक्ति देने के लिए वह वाद-विवाद करता है, लम्बे-लम्बे भाषण देता है। किन्तु उपन्यास शिल्प की दृष्टि से इस प्रकार के लम्बे-लम्बे वाद-विवाद-मूलक कथोपकथन तथा भाषण कथानक की गति में बाधा पहुँचाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पाठक कथारस का आस्वाद भली-भाँति नहीं ले पाता। अतः शिल्प की दृष्टि से उपन्यास के कथोपकथन संक्षिप्त होने चाहिए। डा. बैजनाथप्रसाद शुक्ल के मतानुसार इस प्रकार का रसपराङ्मुख साहित्य अपने स्तर से गिर जाता है। लेखक जब किसी विषय पर विशद प्रकाश डालने का मोह संवरण नहीं कर पाता तो प्रायः कथोपकथन लम्बे-लम्बे हो जाते हैं। इस प्रकार शिल्पगत-त्रुटि से उपन्यास बच नहीं पाता है।" 36

पाठक लम्बे-लम्बे कथोपकथनों और भाषणों से बचने के लिए प्रायः उन्हें छोड़ देता है। वर्माजी ने आलोच्य उपन्यास में भी इसका निवारण नहीं किया है। उपन्यास में लम्बे-लम्बे वाद-विवादमूलक संवाद प्राप्त होते हैं। इस प्रकार के कथोपकथन अधिकतर धार्मिक, राजनीतिक वाद-विवादों एवं व्यक्तिगत तर्क-वितर्कों से सम्बन्धित हैं। इन कथोपकथनों में (पृ. 316-17, 331-32, 355-56, 365-66, 385, 401, 403-4, 411-12, 437-38, 449, 455-56, 520, 552 आदि में सम्मिलित) गंगाप्रसाद, ज्ञानप्रकाश, अलीरजा, संतो, मलका, लाल रिपुदमनसिंह, फरहतुल्ला आदि के संवाद बहुत ही विस्तृत हो गए हैं। इस प्रकार के संवाद अस्वाभाविक प्रतीत होते हैं। संतो के संवाद पृष्ठ 500 से 504 तक फैले हैं और इस बीच गंगाप्रसाद मात्र हाँ-हूँ करता रहता है। उसी प्रकार लाल रिपुदमनसिंह अपनी पत्नी और उसके प्रेमी शिवप्रताप की हत्या की कथा गंगाप्रसाद को सुनाता है जो लगभग 297 से 307 पृष्ठ तक यानी लगभग दस पृष्ठों तक छलांग लगाते हैं। यह एकतर्फा संवाद उपन्यास के प्रवाह को शिथिलता प्रदान करता है, इतनाही नहीं यह संवाद उपन्यास में अनावश्यक जुड़ी हुई एक कहानी मात्र बनकर रह गये हैं। इसके बावजूद भी लाल रिपुदमनसिंह के संवाद निहायत रोचक और कौतुहलवर्धक एवं स्वाभाविक हैं। प्रस्तुत उपन्यास के कथोपकथन के संदर्भ में डा. कुसुम वार्ष्णेय का मत अवलोकनीय है - "भूले बिसरे चित्र' के संवाद अत्यंत रोचक, सरस और पात्रानुकूल हैं। इसमें निरर्थक कथोपकथनों का अभाव ही

अधिकांश संवाद चरित्र-प्रकाश में सहायक हुए हैं।" [37]

भगवती बाबू के उपन्यासों के विशेष अध्येता डा. बैजनाथ प्रसाद शुक्ल की यह शिकायत है कि "भगवतीचरण वर्मा के उपन्यास संवादो से भरे हुए होने पर भी चरित्राभिव्यक्ति करने में पूर्णतः सक्षम नहीं हैं। कथानक को गति देने, स्थिति का निर्माण करने, समस्याओं पर प्रकाश डालने, राजनीतिक तथा सामाजिक विषयों का बोझ ढोने आदि में संवादो का एक बहुत बड़ा भाग लग जाने के बाद पात्रों का चरित्र-चित्रण भली-भाँति नहीं हो पाता है। वर्माजी के अधिकांश औपन्यासिक पात्र समाज के उच्चवर्ग से सम्बन्धित हैं, जो क्लबों, पार्टियों, डिनरों, सभा-सोसाइटियों में ही एक दूसरे के सम्पर्क में आते हैं। इस प्रकार यह पात्र औपचारिक भेटों में अपनी बातचीत के प्रत्येक शब्द के प्रति जागरुक होने के कारण मन का चोर नहीं खोलते हैं। संवादों के आधार पर उनका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता।" [38] डा. बैजनाथ प्रसाद शुक्ल का यह मत निराधार भी नहीं लगता क्यों कि वह वर्माजी के सभी उपन्यासों को लक्ष्य करके ही यह आरोप करते हैं। किन्तु 'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास के संदर्भ में यह आरोप मिथ्या लगता है क्यों कि उपन्यास में केवल मध्य-वर्ग का ही चित्रण नहीं है बल्कि उच्च-वर्ग और निम्न-वर्ग का भी चित्रण भली-भाँति हुआ है। इसमें अभिनयात्मक शिल्पान्तर्गत संवादात्मक शिल्प की विशेष महत्ता है क्यों कि पात्रों के कार्य-कलाप ही केवल उनके चरित्र के परिचायक नहीं हैं, अपितु उनके संवाद ही अधिकतर चरित्र-व्यंजक बन गये हैं। संक्षेप में उपन्यास के कथोपकथन चरित्राभिव्यक्ति में अत्यंत सहायक सिध्द हुए हैं।

डा. बैजनाथ प्रसाद शुक्ल जहां ऊपरि आरोप करते हैं वहीं अगले ही पृष्ठ पर वे लिखते हैं, "'भूले बिसरे चित्र' के शिवलाल, ज्वालाप्रसाद, गंगाप्रसाद, छिनकी, जैदेई, संतो इन सभी पात्रों के कथोपकथन उनके चरित्रों का उद्घाटन करते हैं।" [39] डा. शुक्ल के इस मत से हम सहमत हैं।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त समस्त विवेचन, विश्लेषण के पश्चात हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि 'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास के कथोपकथन शिल्प की दृष्टि से समृध्द हैं। प्रस्तुत उपन्यास समाज के विभिन्न वर्गों से सम्बन्धित होने के कारण इसमें पात्रों की विविधता है। उपन्यासकार ने इन विभिन्न पात्रों का चरित्रांकन उनके विविधतापूर्ण तथा स्वाभाविक कथोपकथनों द्वारा सफलता के साथ प्रस्तुत किया है। उपन्यास में कथोपकथन-शिल्प के प्रायः सभी गुण परिलक्षित होते हैं। शिवलाल, ज्वालाप्रसाद, गंगाप्रसाद, नवल, छिनकी, भीखू संतो, मलका, जैदेई आदि के कथोपकथन

स्वाभाविक, सुन्दर, रोचक तथा उनके चरित्रोद्‌घाटन में अत्यंत सहायक सिध्द हुए हैं । इतना ही नहीं पात्रों के कथोपकथन देशकाल के विलुप्त कड़ियों को जोड़ने में भी अत्यंत सहायक हैं । इस प्रकार यह कथोपकथन कथा-विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं ।

ऊपरि अनेक गुणों के बावजूद भी आलोच्य उपन्यास कथोपकथन शिल्प की दृष्टि से सर्वथा निर्दोष नहीं रहा है । इसमें संक्षिप्त कथोपकथन दुलर्भ हो गये हैं । लम्बे-लम्बे वाद-विवादमूलक तथा तर्क-वितर्कपूर्ण कथोपकथन शिल्प की दृष्टि से क्षतिग्रस्त बन गए हैं । गंगाप्रसाद, ज्ञानप्रकाश, फरहतुल्ला, संतो, मलका, लाल रिपुदमनसिंह आदि पात्रों के कथोपकथनों में कुछ अस्वाभाविक वृध्दि हुई है । किन्तु विश्व के महान उपन्यासों में भी इस प्रकार के दोषों की सम्भावना रहती ही है और फिर 'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास तो एक विशालकाय युग के भूले बिसरे चित्रों को समेटे हुए है । इसके बावजूद भी उपन्यास के लम्बे-लम्बे संवादमूलक कथोपकथन रोचक और मार्मिक हैं । कुल मिलाकर 'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास की कथोपकथन योजना अत्यंत स्वाभाविक, सरस, पात्रानुकूल, प्रसंगानुकूल एवं भावानुरुपता से भरपूर है । रोचकता और मार्मिकता इसके सबसे अधिक महत्वपूर्ण गुण हैं । इस दृष्टि से वर्माजी की यह प्रौढतम कृति है । 'भूले बिसरे चित्र' उपन्यास की लोकप्रियता स्वयं इसका प्रमाण है ।

× × ×

× संदर्भ-संकेत सूची ×

1. टंडन प्रतापनारायण डॉ. हिन्दी उपन्यासः उद्भव और विकास, पृ.35
2. शुक्ल बैजनाथप्रसाद डॉ., भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना, पृ.413
3. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ.5
4. -- वही -- पृ. 170
5. -- वही -- पृ. 45-46
6. -- वही -- पृ. 243-44
7. -- वही -- पृ. 80
8. -- वही -- पृ. 5-6-7
9. -- वही -- पृ. 399-400
10. शुक्ल बैजनाथ प्रसाद डॉ., भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना, पृ. 415-16
11. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ. 1
12. -- वही -- पृ. 7
13. -- वही -- पृ. 237
14. -- वही -- पृ. 238
15. शुक्ल बैजनाथ प्रसाद डॉ., भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना, पृ. 416
16. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ. 144
17. -- वही -- पृ. 106-7
18. शुक्ल बैजनाथ प्रसाद डॉ., भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना, पृ. 416
19. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ. 141-42
20. -- वही -- पृ. 275
21. -- वही -- पृ. 58
22. -- वही -- पृ. 534-35
23. -- वही -- पृ. 190
24. -- वही -- पृ. 673
25. -- वही -- पृ. 339

26. शुक्ल बैजनाथ प्रसाद डॉ., भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना, पृ. 419

27. वर्मा भगवतीचरण, भूले बिसरे चित्र, पृ. 239

28. -- वही -- पृ. 239

29. -- वही -- पृ. 183

30. -- वही -- पृ. 480

31. -- वही -- पृ. 417

32. -- वही -- पृ. 170

33. -- वही -- पृ. 352

34. -- वही -- पृ. 695-96

35 -- वही -- पृ. 576

36. शुक्ल बैजनाथ प्रसाद डॉ., भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना, पृ. 422

37. वार्ष्णेय कुसुम डॉ., भगवतीचरण वर्मा, पृ. 124

38. शुक्ल बैजनाथ प्रसाद डॉ., भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में युगचेतना, पृ. 394

39. -- वही -- पृ. 395

x x x